इकाई 1 आर्थिक भूगोल : एक परिचय (Economic Geography : An Introduction)

संरचना (Structure)

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 आर्थिक भूगोल की परिभाषा
1.3 अर्थव्यवस्था के खण्ड
1.4 प्राथमिक उत्पादन का भूगोल : कृषि उत्पादन एवं व्यापार
1.5 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
1.6 सारांश
1.7 मुख्य शब्दावली
1.8 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.9 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय (Introduction)

भूगोल विज्ञान के अन्तर्गत पृथ्वी के धरातल पर पाये जाने वाले भौतिक पर्यावरण एवं मानवीय क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। **भौतिक पर्यावरण** के अन्तर्गत भौम्याकृति, जलवायु, मृदा, वनस्पति, जलाशय एवं जीव–जन्तु आदि का अध्ययन किया जाता है जबकि **मानवीय क्रिया–कलाप** जिन्हें सांस्कृतिक पर्यावरण की संज्ञा भी दी जाती है, के अन्तर्गत मानव का खान–पान, रहन–सहन, रीति–रिवाज, सामाजिक एवं आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। भौतिक पर्यावरण के तत्वों को भौतिक भूगोल के अध्ययन के नाम से पुकारते हैं जबकि सांस्कृतिक वातावरण के अध्ययन को मानव भूगोल के अध्ययन के नाम से पुकारते हैं।

मुख्यतः भूगोल की दो शाखाएँ हैं– (i) भौतिक भूगोल (ii) मानव भूगोल। भूगोल की इन दोनों ही शाखाओं की अनेक उपशाखाएँ हैं। **आर्थिक भूगोल** भी मानव की इन उपशाखाओं में से एक है। अतः यह कह सकते हैं कि, आर्थिक भूगोल मानव भूगोल की एक महत्वपूर्ण शाखा है। इस शाखा के अन्तर्गत मनुष्य के आर्थिक क्रिया–कलापों तथा आर्थिक विकास के स्तर का अध्ययन किया जाता है। मानव के आर्थिक कार्यों के भिन्न–भिन्न स्थानों पर भौतिक पर्यावरण के कारण भिन्नता मिलती है। यह भिन्नता न केवल स्थान के प्रभाव के कारण होती है वरन् मानव के प्रयत्नों के अन्तर के कारण होती है। आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत मानवीय क्रियाओं के स्थानिक वितरण अर्थात उनकी अवस्थितियों तथा सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इस विषय में प्राकृतिक, जैविक, मानवीय और आर्थिक संसाधनों एवं क्रियाओं की विभिन्नताओं के कारणों व उनके निवारणों का भी उल्लेख किया जाता है। आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत इन्हीं क्षेत्रीय आर्थिक भिन्नताओं का अध्ययन किया जाता है।

1.1 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत पाठ्यक्रम का उद्देश्य विद्यार्थियों को प्राथमिक से तृतीयक क्रियाओं युक्त विश्व अर्थव्यवस्था के स्थानिक प्रतिरूप से परिचित कराना है। वर्तमान वैश्विक अर्थव्यवस्था में समसामयिक मुद्दे, जैसे क्षेत्रीय विभिन्नताएं, अर्थव्यवस्था में वर्तमान विश्वव्यापी परिवर्तन, विशेषतः वैश्वीकरण के संदर्भ में समझाना है।

1.2 आर्थिक भूगोल की परिभाषा (Definition of Economic Geography)

जैसा कि स्पष्ट है कि आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत क्षेत्रीय आर्थिक भिन्नताओं का अध्ययन किया जाता है, अतः यह (आर्थिक भूगोल) एक गतिशील अध्ययन है। इसको परिभाषित करते हुए अनेक विद्वानों ने अपने–अपने विचार निम्न प्रकार व्यक्त किये हैं–

जर्मन विद्वान **रूडोल्फ वेटगेन्स** ने आर्थिक भूगोल को परिभाषित करते हुए लिखा है, ''आर्थिक भूगोल, विभिन्न प्रदेशों में पृथ्वी की संसाधनता तथा मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं की अन्योन्य क्रिया का अध्ययन एवं विशेषतः तज्जनित सार्थक परिणामों के वितरण की व्याख्या करता है।'' गोत्स्ट के अनुसार, ''आर्थिक भूगोल में विश्व के विभिन्न भागों की उन विशेषताओं का वैज्ञानिक विवेचन किया जाता है जिनका वस्तुओं के उत्पादन पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।''

आर. ई. मरफी के शब्दों में, ''आर्थिक भूगोल मनुष्य के जीविकोपार्जन की विधियों में एक स्थान से दूसरे स्थान पर मिलने वाली समानता एवं विषमता का अध्ययन करता है।''

चिशोल्म के अनुसार, ''आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत उन सभी भौगोलिक परिस्थितियों का विवरण आता है जो वस्तुओं की उत्पत्ती, उनके चयन तथा क्रय–विक्रय पर प्रभाव डालती हैं। इसके अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह है कि, यह हमें इस बात का ज्ञान कराता है कि किसी क्षेत्र की भौगोलिक दशाओं का भाषा, वाणिज्यिक और आर्थिक विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है।''

आर. एन. ब्राउन के अनुसार, ''आर्थिक भूगोल, भूगोल की वह शाखा है जिसमें प्राकृतिक वातावरण (जड़ और चेतन) के मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन होता है।''

प्रो. ई. बी. शॉभाषा के शब्दों में, ''आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत इस बात का अध्ययन किया जाता है कि किस प्रकार मानव की विभिन्न जीविकोपार्जन क्रियाएँ विश्व के उद्योगों, उसके आधारभूत साधनों और औद्योगिक वस्तुओं की प्राप्ति के अनुरूप होती हैं।''

प्रो. सी. जी. जॉन्स और **जी. जी. डार्कनवाल्ड** के अनुसार, ''आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत मानव के उत्पादक धन्धों का अध्ययन किया जाता है। यह इस बात का संकेत करता है कि क्यों प्रदेश विशेषों में किसी वस्तु का उत्पादन और वहाँ से निर्यात

होता है तथा क्यों अन्य प्रदेशों में इनका आयात एवं उपभोग किया जाता है। इनके अनुसार शिकार करना, मछली पकड़ना, पशु चराना, वन प्रदेशों में वस्तुएँ एकत्रित करना, खानें खोदना, उद्योग तथा यातायात सम्बन्धी उत्पादक क्रियाओं का अध्ययन आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत किया जाता है।''

आर्थिक भूगोल का क्षेत्र (Scope of Economic Geography)

आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत मानव की आर्थिक क्रियाओं पर उसके भरण–पोषण, भोजन, वस्त्र, निवास–स्थान, तथा विलासिताओं की आवश्यकता पूर्ति से सम्बन्धित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है। आर्थिक भूगोल का विषय–क्षेत्र अति विस्तृत है। मानव के आर्थिक कार्यों तथा उन पर प्रभाव डालने वाले सभी प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का अध्ययन इसके अन्तर्गत किया जाता है। इस प्रकार वस्तु के उत्पादन, वितरण एवं उपभोग के सभी कार्य आर्थिक भूगोल के विषय हैं।

आर्थिक भूगोल में मानव की उत्पादन, विनिमय, उपभोग आदि क्रियाओं का उल्लेख किया जाता है। इसमें इस बात का भी वर्णन होता है कि मानव किस प्रकार पृथ्वी के आर्थिक संसाधनों का विदोहन करता, विभिन्न वस्तुओं का उत्पादन, परिवहन, वितरण, उपभोग या विनिमय किस प्रकार किया जाता है।

इस विषय में आर्थिक क्रियाएँ कब, कैसे, कहाँ, क्यों और किन–किन स्थानों पर की जाती हैं, आदि बातों का अध्ययन किया जाता है। मानव अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भिन्न–भिन्न जीविकोपार्जन के साधनों (लकड़ी काटना, मछली पकड़ना, शिकार करना, कृषि करना, भोज्य पदार्थो को एक करना, खान खोदना, उद्योग–धन्धे चलाना, व्यापार करना और विभिन्न सेवाओं में नौकरी करना आदि) में रहता है। उसके इन आर्थिक प्रयत्नों पर मृदा, भू–संरचना, जलवायु, खनिज संसाधन, भौगोलिक स्थिति, परिवहन की सुविधा जनसंख्या घनत्व आदि पर वातावरण के विभिन्न अंगों का प्रभाव पड़ता है। आर्थिक भूगोलवेत्ता का मुख्य उद्देश्य मानव प्रयत्नों पर पड़ने वाले वातावरणीय प्रभाव का आकलन व विश्लेषण करना है। अतः आर्थिक भूगोल का विषय–क्षेत्र उतना ही व्यापक है जितना मानव की आर्थिक क्रियाओं का विस्तार।

वस्तु, आर्थिक भूगोल का क्षेत्र, प्राकृतिक संसाधन (जलवायु, मृदा, खनिज, प्राकृतिक वनस्पति एवं पशुधन), मानवीय संसाधन (जनसंख्या, मानव क्षमता तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक संगठन) तथा आर्थिक क्रिया–कलाप हैं।

डॉ. कौशिक के अनुसार आर्थिक भूगोल के अध्ययन क्षेत्र के तीन भाग हैं–

1. प्राकृतिक संसाधनों का मूल्यांकन तथा मात्राकरण,
2. मानवीय संसाधनों का मात्राकरण एवं सम्भावनाओं का अध्ययन,
3. आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन,

1. प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources)

प्राकृतिक संसाधनों में निम्नलिखित मुख्य हैं–

1. प्रदेश या देश की स्थिति,
2. जलवायु–इसमें सूर्य से मिलने वाली शक्ति एवं उसका संसाधन के रूप में प्रयोग,
3. थलीय संसाधन,
4. मृदा या मिट्टी,
5. जलीय संसाधन,
6. खनिज एवं शक्ति संसाधन,
7. वनस्पति संसाधन,
8. पशु संसाधन।

2. मानवीय संसाधन (Human Resources)

इसके अन्तर्गत प्रदेश या देशों की जनसंख्या, उनकी सघनताएँ, जनसांख्यिकी विशेषताएँ, क्षमताएँ, नर–नारी अनुपात, आयुवर्ग, जनता की शिक्षा, टैक्नोलाजी की प्रगति, ग्रामीण एवं नगरों का अनुपात, सामाजिक संगठन, जीवनयापन स्तर आदि शामिल हैं।

3. आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन (Study of Economic Activities)

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित आते हैं–

1. आर्थिक क्रियाओं का क्षेत्रीय एवं स्थानीय वितरण,
2. आर्थिक क्रियाओं की अवस्थिति,
3. आर्थिक क्रियाओं की विशेषताएँ,
4. आर्थिक क्रियाओं का वर्गीकरण,
5. आर्थिक क्रियाओं का अन्य घटनाओं से सम्बन्ध,
6. आर्थिक क्रियाओं के सांस्कृतिक पक्ष,
7. आर्थिक भूदृश्य की संकल्पनाएँ,
8. आर्थिक उन्नति का स्तर,
9. स्थानिक संगठन,
10. प्रादेशिक आर्थिक विकास का स्तर,
11. आर्थिक विकास योजना एवं संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग।

आर्थिक भूगोल का विषय–वस्तु
(Contents of Economic Geography)

आर्थिक भूगोल की विषय–वस्तु अत्यन्त व्यापक है। इस सम्बन्ध में भूगोलविदों में पर्याप्त मतभेद हैं। सामान्यतः आर्थिक भूगोल की विषय सामग्री में तीन विचारधाराएँ प्रमुख हैं–

1. आर्थिक भूगोल मानव के आर्थिक क्रियाकलाप तथा जीविकोपार्जन के साधनों का अध्ययन है।
2. आर्थिक भूगोल में मानव के भौतिक एवं सांस्कृतिक वातावरण का अध्ययन होता है।
3. आर्थिक भूगोल विश्व के विभिन्न भागों में पाए जाने वाले कृषि, खनिज तथा औद्योगिक साधनों के उत्पादन, वितरण, उपभोग, वाणिज्य एवं व्यापार तथा परिवहन का अध्ययन होता है।

मानव के आर्थिक क्रियाकलापों के अन्तर्गत उत्पादन, विनिमय एवं वितरण प्रमुख हैं।

उत्पादन सम्बन्धी आर्थिक कार्यों को हम तीन वर्गों में विभाजित करते हैं, जो निम्नलिखित है–

(i) प्राथमिक उत्पादन (ii) द्वितीयक उत्पादन (iii) तृतीयक उत्पादन।

(i) प्राथमिक उत्पादन– प्राथमिक उत्पादन में प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का सीधा उपयोग होता था। कृषि कार्य में मिट्टी का सीधा उपयोग फसलें उत्पादन हेतु किया जाता है। इसी प्रकार जलीय क्षेत्रों में मत्स्य उत्पादन, जंगलों में लकड़ी काटना, खनन क्रिया आदि कार्य प्राथमिक उत्पादन के अन्तर्गत शामिल हैं। प्राथमिक उत्पादन में कच्चे माल का उत्पादन होता है। इसमें कृषि से उत्पन्न होने वाली वस्तुओं का उत्पादन प्रमुख है। इन वस्तुओं के उत्पादन में मिट्टी, जलवायु एवं जल संसाधनों का प्रभाव विशेष होता है। इनका अध्ययन करते समय इन सभी परिस्थितियों पर विशेष बल दिया जाता है। इनके अतिरिक्त कच्चा माल पशुओं एवं वन्य क्षेत्रों से भी प्राप्त होता है; जैसे दूध, माँस, खाल, ऊन, लकड़ी, पत्ते आदि। कच्चा माल प्राप्त करने का एक साधन खनन भी है जिससे विभिन्न प्रकार के खनिज पदार्थ प्राप्त होते हैं। ये सभी प्राथमिक उत्पादन सम्बन्धी आर्थिक कार्यों के अन्तर्गत सम्मिलित हैं। इस वर्ग में कार्यरत व्यक्ति लाल कॉलर श्रमिक (Red Collar Worker) कहलाते हैं।

(ii) द्वितीयक उत्पादन– द्वितीयक उत्पादन में किसी प्रकृति प्रदत्त संसाधन का सीधा उपयोग नहीं किया जाता वरन् उनका साफ, परिष्कृत अथवा रूप परिवर्तन करके अधिक उपयोगी बनाया जाता है। इससे उसके मूल्य में वृद्धि होती है; जैसे कपास से वस्त्र, गेहूँ से आटा या मैदा बनाना, लौह–अयस्क को गलाकर इस्पात तैयार करना, लकड़ी से फर्निचर व कागज बनाना आदि। इन वस्तुओं को तैयार करने वाले उद्योगों को द्वितीयक उद्योग या गौण उद्योग कहते हैं। इस वर्ग में कार्य करने वाले व्यक्ति को नीला कॉलर श्रमिक (Blue Collar Worker) कहते हैं।

(iii) तृतीयक उत्पादन– तृतीयक उत्पादन के अन्तर्गत वे सभी क्रियाएं आती हैं, जो प्राथमिक अथवा द्वितीयक उत्पादन की वस्तुओं की वितरण व्यवस्था द्वारा उपभोक्ताओं, उद्योगपतियों एवं व्यापारियों तक पहुंचाने से सम्बन्धित क्रियाएं (सेवाएं) सम्मिलित हैं। इस प्रकार की क्रियाओं के अन्तर्गत वस्तुओं का स्थानान्तरण (Transportation), संचार और संवादवाहन (Communication), वितरण (Distribution) एवं संस्थाओं और व्यक्तियों की सेवाएं तथा विनिमय (Exchange) सम्मिलित की जाती हैं। इस वर्ग की क्रियाओं में सहयोग करने वाले व्यक्ति प्रबन्धक, लेखाकार, लिपिक, आशुलिपिक, अधिकारी, रक्षक, सुरक्षाकर्मी, सूचना प्रसारक एवं दुकानदार आदि सम्मिलित हैं। इस वर्ग में कार्यरत व्यक्ति को गुलाबी कॉलर श्रमिक (Pink Collar Worker) कहते हैं।

उपर्युक्त के अतिरिक्त चतुर्थक एवं पंचम आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन आर्थिक भूगोल की विषय–वस्तु के अन्तर्गत शामिल है। चतुर्थक क्रियाओं में शिक्षण, चिकित्सा, सूचना, मनोरंजन व राजकीय सेवाएं आती हैं। पंचम क्रियाओं में शोध वैज्ञानिक, विधि अधिकारी एवं वित्तीय सलाहकार सम्मिलित किए जाते हैं।

सभी आर्थिक क्रियाएं अन्तर्सम्बन्धित होती हैं। संसाधन का उत्पादन स्थल तक पहुँचाना, उत्पादित पदार्थों को उपभोक्ताओं तक ले जाना आवश्यक होता है। इस कार्य हेतु परिवहन के साधन, जैसे सड़क, रेलमार्ग, जलमार्ग तथा वायुमार्ग एवं संचार साधनों की सहायता ली जाती है। आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन उनकी अवस्थिति (Location), उनके क्षेत्रीय वितरण, उत्पादन प्रक्रिया एवं उत्पादन की विशिष्टताओं के सन्दर्भ में भी किया जाता है। आर्थिक क्रियाओं की स्थापना के पीछे कुछ कारक भी होते हैं। इन कारकों का सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि में अध्ययन किया जाता है; जैसे प्राथमिक उत्पादन की प्रक्रिया के अन्तर्गत कृषि के स्थानीयकरण में वानथ्यूनेन का सिद्धान्त और द्वितीयक उत्पादन की आर्थिक क्रिया में वेबर का उद्योगों की स्थापना का सिद्धान्त आदि मुख्य हैं।

आर्थिक क्रियाओं में भूदृश्यों की उत्पत्ति होती है। आर्थिक क्रियाओं का स्थानिक संगठन, आर्थिक प्रगति का स्तर, प्रादेशिक आर्थिक विकास, आर्थिक नीतियां, विकास की योजनाएं, नियोजन आदि सभी आर्थिक भूगोल की विषय–वस्तु के प्रमुख तत्व हैं।

आर्थिक क्रियाओं का स्वरूप निरन्तर व्यापक एवं गहन हो रहा है। अतः इनमें विशिष्टीकरण हेतु नवीन उपशाखाओं का अभ्युद्य होने लगता है जिससे कृषि भूगोल, उद्योग भूगोल, परिवहन भूगोल, विपणन भूगोल, वाणिज्य भूगोल, संसाधन भूगोल जैसी शाखाओं की उत्पत्ति हुई। आज ये शाखाएं स्वतन्त्र रूप से विषय–क्षेत्र की व्यापकता का बोध कराती है।

(ii) गौण उत्पादन क्रियाएँ (Secondary Prodcution Activities)– इन्हें द्वितीयक व्यवसाय भी कहते हैं। इन क्रियाओं के अन्तर्गत प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधनों का रूप परिवर्तन करके उन्हें उपयोग योग्य बनाया जाता है। जैसे– कपास से कपड़ा बुनकर वस्त्र बनाना, लोहे को गलाकर इस्पात के यंत्र बनाना, बिजली के उपकरण बनाना, लकड़ी से फर्निचर बनाना, लुग्दी से कागज बनाना आदि। इन वस्तुओं को तैयार करने वाले उद्योगों को गौण उद्योग कहते हैं। इन क्रियाओं के अन्तर्गत सभी प्रकार के निर्माणकारी उद्योग आते हैं। यह उद्योग प्राथमिक क्रियाओं से आगे की क्रियाओं से सम्बन्धित हैं। अतः इन्हें द्वितीयक आर्थिक क्रियाएँ भी कहते हैं। इन क्रियाओं में लगे लोगों को नीला कॉलर श्रमिक कहते हैं।

(iii) तृतीयक क्रियाएँ (Tertiary Activities)– इन क्रियाओं के अन्तर्गत वे सभी क्रियाएँ सम्मिलित की जाती हैं जो प्राथमिक अथवा द्वितीयक क्रियाओं द्वारा उत्पादित वस्तुओं को उपभोक्ता और उद्योगपतियों तक पहुँचाती हैं। इसके अन्तर्गत विनिमय, वितरण, संचार एवं परिवहन आदि हैं। यह क्रियाएँ उपरोक्त दोनों क्रियाओं को सेवा प्रदान करती हैं। अतः इन्हें तृतीयक क्रियाएँ कहते हैं।

इसके अतिरिक्त अन्य आर्थिक क्रियाएँ जैसे– वित्तीय, स्वास्थ सेवा कार्य, शिक्षा, राजकीय सेवाएँ एवं मनोरंजन आदि चतुर्थक क्रियाओं के अन्तर्गत आते हैं।

1.4 प्राथमिक उत्पादन का भूगोल : कृषि उत्पादन एवं व्यापार (Geography of Primary Production : Agriculture)

विश्व में मानव अपने जीविकोपार्जन के लिए विभिन्न प्रकार के व्यवसाय करता है जिनमें प्राकृतिक तत्वों का सीधा उपयोग होता है। इन्हें प्राथमिक उत्पादन के व्यवसाय कहा जाता है। कृषि कार्य में मिट्टी का सीधा उपयोग फसल उगाने के लिए किया जाता है। इसी प्रकार के जल क्षेत्रों में मछली पकड़ना, खानों से कोयला, लोहा आदि खनिज निकालना, वनों से लकड़ियाँ काटना अथवा पशुओं से ऊन, चमड़ा, बाल, खालें, हड्डियाँ आदि प्राप्त करना प्राथमिक उत्पादन क्रियाएँ हैं। इनसे सम्बन्धित उद्योगों को प्राथमिक उद्योग की संज्ञा दी जाती है, जैसे– कृषि करना, खानें खोदना, मछली पकड़ना, आखेट करना, वस्तुओं का संचय करना, वन सम्बन्धी उद्योग में सम्मिलित हैं। वर्तमान में कृषि एक प्रमुख व्यवसाय है।

कृषि का अर्थ व स्वरूप (Meaning and Form of Agriculture)

कृषि का अर्थ खेती करना है। कृषि के अन्तर्गत फसलोत्पादन प्रमुख क्रिया है। कुछ विद्वानों के अनुसार कृषि का अर्थ फसलोत्पादन है, लेकिन अधिकांश विद्वानों के अनुसार यह मृदा पोषण कला है जिसमें पशुपालन को भी शामिल किया जाता है। कृषि वृहद स्तरीय मृदारोपण एवं फार्मिंग (खेती) कार्यकलाप का अभ्यास एवं विज्ञान हैं। **जिम्मरमेन** ने 'ॲग्रीकल्चर' शब्द की विस्तृत परिभाषा प्रस्तुत की है। इनके मतानुसार कृषि के अन्तर्गत भूमि से सम्बन्धित मानव द्वारा किये गये सभी उत्पादक कार्य, पशुपालन, फसल उगाना, वृक्ष लगाना, सिंचाई करना, फार्मिंग, मछली तथा अन्य जल–जीव पालन आदि

कार्य सम्मिलित होते हैं। कृषि कार्य, आखेट एवं एकत्रीकरण की अवस्था से लेकर आधुनिक तकनीकि अवस्था तक की कृषि विशेषताओं से सम्बन्धित है। कृषि का उद्देश्य प्रकृति प्रदत्त उत्पादनों का उपयोग करके मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।

मैकार्टी के अनुसार, सोद्देश्य फसलोत्पादन तथा पशुपालन कार्य को कृषि कहते हैं, आधुनिक युग में कृषि एक व्यवसाय है। व्यापारिक कृषि व्यवस्था में कृषक का मूल उद्देश्य लाभ कमाना होता है। लागत तथा आय दो प्रधान पहलु होते हैं जिससे शुद्ध लाभ राशि की जानकारी होती है। एक दृष्टिकोन से कृषि एक क्रमबद्ध व्यवसाय है जिसमें सभी क्रियाएँ सोद्देश्य होती हैं।

कृषि को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting the Agriculture)

कृषि को प्रभावित करने वाले कारकों को निम्नलिखित वर्गों में बाँट सकते है– (i) भौतिक कारक, (ii) सामाजिक कारक, (iii) आर्थिक कारक, (iv) सांस्कृतिक कारक, (v) राजनीतिक कारक, (vi) प्राविधिक कारक।

(i) भौतिक कारक (Physical Factors)– भौतिक कारकों में निम्नलिखित तथ्य अधिक महत्वपूर्ण हैं–

(अ) धरातल (Relief)– कृषि पर प्रभाव डालने वाले भौतिक कारकों में मृदा का स्वभाव एवं गुण, तापमान, वर्षा, बादलों की दशा आदि प्रमुख हैं। कृषि के लिए धरातल के ढाल का स्वभाव, ढाल की मात्रा और ढाल की दशा का प्रभाव पड़ता है। मैदानी भागों में कृषि कार्य सरल और पहाड़ी भागों में कृषि कार्य कठिन होता है। यही नहीं जिस धरातल में पाई जाने वाली मृदा में उर्वरा शक्ति कम होती है या प्रायः समाप्त हो जाती है, वहाँ उचित एवं पर्याप्त मात्रा में खाद देकर भूमि को पुनः उर्वरा किया जा सकता है। जिन स्थानों पर ऐसा सम्भव नहीं हो पाया है वहाँ कृषि के स्वरूप को बदला गया है।

(ब) जलवायु (Climate)– जलवायु के तत्वों में तापमान और वर्षा का कृषि कार्यों पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। उष्ण कटिबन्धीय देशों की फसलें शीतोष्ण कटिबन्धीय देशों में और शीतोष्ण कटिबन्धीय देशों की फसलें उष्ण कटिबन्धीय देशों में जलवायु के तत्वों पर निर्भर रहकर नहीं की जा सकती हैं। पौधों की बढ़ोत्तरी के लिए निश्चित तापमान की आवश्यकता होती है। कम तापमान होने पर पौधे का अंकुरित होना एवं उसकी बढ़ोत्तरी रूक जाती है। उच्च अक्षांशों में जहाँ ग्रीष्म ऋतु छोटी होती है वहाँ केवल उसी ऋतु में फसलें बोई जाती हैं।

तापमान के साथ–साथ वर्षा भी फसलों के उत्पादन को प्रभावित करती है। शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में जहाँ वर्षा पर्याप्त मात्रा में होती है, फसलें कम जल में ही पैदा हो जाती हैं। जबकि उष्ण कटिबन्धीय देशों में जहाँ वर्षा कम होती है, फसलों के उत्पादन के लिए सिंचाई के साधनों की आवश्यकता पड़ती है।

पवन की दिशा भी फसलों के उत्पादन को प्रभावित करती है। यही कारण है कि चाय की खेती पहाड़ी ढालों पर भी छायादार वृक्षों के साथ की जाती है।

(ii) सामाजिक कारक (Social Factors)– सामाजिक कारकों के अन्तर्गत जनसंख्या, शिक्षा का स्तर और मानवीय रूचि का स्पष्ट प्रभाव पड़ता है।

(अ) जनसंख्या (Population)– विश्व के अधिक जनसंख्या वाले देशों में गहन कृषि की जाती है क्योंकि वहाँ भूमि जैसे सीमित साधन से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करके देश की जनसंख्या की खाद्यान्न समस्या को हल किया जाता है। इसके विपरीत कम जनसंख्या वाले देशों में भूमि साधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होने के कारण विस्तृत कृषि की जाती है, जिसमें अधिक खाद्यान्न उत्पादन किया जाता है तथा कम खाद्यान्न उत्पादन वाले देशों को निर्यात किया जाता है। जैसे– ऑस्ट्रेलिया और संयुक्त राज्य अमेरिका में। आज कृषि कार्य जनसंख्या के वितरण एवं घनत्व पर निर्भर है।

(ब) शिक्षा का स्तर (Standard of Education)– आज कृषि करने के ढंग में किसान का पर्याप्त शिक्षित होना आवश्यक है। शिक्षित किसान उत्तम बीज, खाद और यन्त्र आदि का चुनाव शीघ्रता से सुविधापूर्वक कर लेता है और उत्पादन बढ़ा लेता है। इसके विपरित अशिक्षित किसान कृषि के पुराने ढंगों को अपनाता रहता है और उसका उत्पादन नहीं बढ़ पाता है। शिक्षित कृषक को मौसम का भी पर्याप्त ज्ञान होता है जिससे वह अतिवृष्टी या अनावृष्टी से फसल को नष्ट होने से बचा लेता है।

(स) मनुष्य की रूचि (Choice of Man)– मनुष्य का आहार जलवायु से प्रभावित होता है इसका प्रभाव कृषि के प्रकार अथवा विकास पर पड़ता है। उष्ण कटिबंधीय देशों के निवासी चावल प्रिय होते हैं। अतः उन देशों में चावल का उत्पादन पर्याप्त मात्रा में होता है। इसके विपरित शीतोष्ण कटिबंधीय देशों के लोग गेहूँ प्रिय होते हैं और उन देशों में गेहूँ का उत्पादन पर्याप्त मात्रा में होता है। समुद्र के निकट रहने वाले लोगों की रूचि मत्स्य उत्पादन में अधिक होती है।

(iii) आर्थिक कारक (Economic Factors)– आर्थिक कारकों के अन्तर्गत पूँजी की उपलब्धता, श्रमिक पूर्ति, परिवहन के साधन, बाजार की निकटता आदि का कृषि उत्पादन पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है।

(अ) पूँजी की उपलब्धता (Availability of Capital)– कृषि कार्य के लिए पूँजी की उपलब्धता अति आवश्यक है। पर्याप्त पूँजी के कारण ही कृषक के लिए उत्तम बीज, खाद और वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग सम्भव है। कृषि के लिए उत्तम यंत्रों का प्रयोग, सिंचाई के साधनों का समुचित विकास तथा उत्पादित माल को उपभोग बाजार तक पहुँचाने के लिए पूँजी की आवश्यकता होती है।

(ब) श्रमिक पूर्ति (Labour Supply)– कृषि कार्य के लिए पर्याप्त मात्रा में निपुण और सस्ते श्रमिक की आवश्यकता होती है। कुशल एवं पर्याप्त श्रमिक जुताई, बुआई, रोपाई, निराई और मड़ाई आदि में सहायता पहुँचाते हैं क्योंकि श्रमिकों की भूमिका कृषि में महत्वपूर्ण होती है। यही कारण है कि आज चावल, चाय और जूट की खेती उन स्थानों पर पर्याप्त मात्रा में होती है जहाँ अन्य सुविधाओं के अतिरिक्त सस्ते श्रमिक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं।

(स) परिवहन के साधन (Means of Transport)– व्यापारिक ढंग से कृषि की सफलता के लिए आवश्यक है कि कृषि उत्पादक क्षेत्रों का सीधा सम्बन्ध उपभोक्ता केन्द्रों से हो, इसके लिए परिवहन के साधनों की आवश्यकता होती है। तीव्र परिवहन के साधनों के कारण ही बड़े–बड़े खाद्यान्न उत्पादक देश अपने यहाँ का अधिक मात्रा में उत्पादित खाद्यान्न दूसरे आवश्यक वाले देशों को भेजते हैं। आज शीघ्र ही नष्ट होने वाले पदार्थ उपभोक्ता केन्द्रों को सही समय पर शीघ्र ही पहुँचा दिये जाते हैं। भूमध्य सागरीय देशों से रसदार फल, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड और डेनमार्क से मक्खन और दुग्ध आसानी से दूसरे देशों को पहुँचाये जाते हैं।

(द) बाजार की निकटता (Nearness to Market)– आज खाद्यान्न एवं उद्योगों के लिए कच्चा माल दूर स्थित क्षेत्रों से आता है, जबकि तैयार माल शीघ्र ही निकट स्थित बाजार में भेजा जाता है। सागसब्जियाँ, शीघ्र ही नष्ट होने वाले पदार्थ घनी जनसंख्या के क्षेत्रों के निकट इसीलिए पैदा किये जाते हैं कि उन्हें शीघ्रता से उपभोक्ता बाजारों तक पहुँचाया जा सके। यही कारण है कि युरोपीय देश फल, दुग्ध एवं सब्जियों को बाजारों के निकट करते हैं। यही नहीं, आज यू.एस.ए. का फ्लोरिडा राज्य संयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तर–पूर्वी राज्यों को सब्जियाँ; ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, अर्जेन्टाइना ऊन भारत, पाकिस्तान, मिस्त्र कपास अपने अपने बाजारों को भेजते हैं, जिससे इन फसलों के उत्पादन में कृषि के साथ–साथ क्षेत्रीय विशिष्टीकरण भी हो गया है।

इसके अतिरिक्त सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं प्राविधिक कारक भी कृषि व्यवसाय को प्रभावित करते हैं–

(अ) सांस्कृतिक कारक– परम्पराएँ एवं धार्मिक भावनाएँ कृषि विकास को प्रभावित करती हैं। बौद्ध समाज में माँस, मुसलमानों में सूअर का माँस इत्यादि के कार्य पर इनका प्रभाव आज भी परिलक्षित होता है।

(ब) राजनीतिक कारक– शासन की नीति पर कृषि का विकास निर्भर करता है। सरकार किसी विशेष उपज को बढ़ावा देती है, आयात–निर्यात पर प्रतिबन्ध लगाती, कर लगाती या हटाती है। इससे कृषि प्रभावित हो जाती है।

(स) प्राविधिक कारक– कृषि के विकास में वर्तमान में आधुनिक कृषि यन्त्रों के प्रयोग, त्वरित सिंचाई, उन्नत किस्म के हल आदि प्रमुख साधन हैं। वे ही देश कृषि विकास में अग्रणी हैं जो प्राविधिक सभ्यता में कुशल एवं सम्पन्न हैं।